अभिजात मजदूर वर्ग के बारे में

मार्क्स-एंगेल्स के जमाने से ही अभिजात मजदूर वर्ग की समस्या मजदूर वर्ग एवं कम्युनिस्ट आन्दोलन के सामने एक बड़ी समस्या रही है। यह समस्या इसलिए और भी ज्यादा विकराल रही है क्योंकि मजदूर वर्ग का यही हिस्सा अक्सर मजदूर आन्दोलन में नेतृत्व प्रदान करता रहा है और इसीलिये अपनी तमाम गैर सर्वहारा प्रवृत्तियां मजदूर आन्दोलन में घुसेड़ता रहा है। यह मजदूर आन्दोलन में सुधारवाद,अवसरवाद व संशोधनवाद का वाहक एवं सामाजिक आधार रहा है।

अभिजात मजदूर वर्ग की समस्या ने सबसे तीखे ढंग से अपने-आप को प्रथम विश्व युद्ध के दौरान द्वितीय इंटरनेशनल के पतन के रूप में अभिव्यक्त किया। उस समय तमाम सामाजिक-जनवादी पार्टियों के ज्यादातर हिस्सों ने अपने को रातों-रात देशभक्तों व अन्धराष्ट्रवादियों में रूपान्तरित कर लिया और द्वितीय इंटरनेशनल का पतन हो गया। केवल बोल्शेविक पार्टी ही इससे मुक्त रही। द्वितीय इंटरनेशनल के इस पतन के बाद लेनिन ने इस समूची परिघटना का विश्लेषण किया और मार्क्स-एंगेल्स से सूत्र ग्रहण करते हुए अभिजात मजदूर वर्ग की अपनी थीसिस प्रस्तुत की। यहां यह ध्यान रखने की बात है कि लेनिन ने इस प्रवृत्ति को तभी चिन्हित करना शुरू कर दिया था जब 1907 की स्टुटगर्ट कांग्रेस में औपनिवेशिक सवाल पर कई सामाजिक-जनवादी नेताओं ने अवसरवादी रूख अपनाया था।

इस लेख में हम अभिजात मजदूर वर्ग के बारे में लेनिन के विचारों को प्रस्तुत करेंगे - इसकी संरचना,इसकी उत्पत्ति का कारण, इसका राजनीतिक प्रभाव एवं इसका समाधान। अंत में हम आज के विश्व व भारत में अभिजात मजदूर वर्ग की स्थिति पर बात करेंगे और लेनिन के विचारों की रोशनी में आज के लिये कार्यभार निकालने का प्रयास करेंगे।

I

अभिजात मजदूर वर्ग कौन है ?

लेनिन ने अपने लेखों में बार-बार इस बात को परिभाषित किया कि अभिजात मजदूर वर्ग कौन है और इसमें कौन-कौन लोग आते हैं। उन्होंने इतनी बार उसे रेखांकित किया कि इसमें संदेह की कोई गुंजाइश नहीं है।

लेनिन ने कहा कि अभिजात मजदूर वर्ग मजदूरों का ऊपरी संस्तर है। इसमें कुशल मजदूर आते हैं जो अधिक तनख्वाह पाते हैं तथा जो ट्रेड यूनियनों में संगठित हैं । इसमें मजदूरों के नेता हैं ,मजदूर पार्टियों के सांसद हैं , ट्रेड यूनियन के पदाधिकारी हैं, सहकारी समितियों व अन्य संस्थाओं के पदाधिकारी हैं, मजदूर अखबारों के पत्रकार व संवाददाता हैं , इनके अलावा अन्य विशेषाधिकार सम्पन्न लोग हैं। ये सारे और इनके अलावा बाकी अभिजात मजदूर, कुल मजदूरों की नगण्य संख्या बनते हैं लेकिन निरपेक्ष तौर पर इन मजदूरों की संख्या काफी ज्यादा है। ये अभिजात मजदूर ऐसे हैं जो बलिदान से डरते हैं। लेनिन कहते हैं :

''मार्क्स तथा एंगेल्स 40 वर्ष तक ,1852 से 1892 तक इंग्लैंड के औपनिवेशिक मुनाफों तथा इजारेदारियों ***के कारण*** *वहां के मजदूरों के एक भाग (यानि ऊपरी तबकों,नेताओं,''अभिजातों'') के* ***बुर्जुआकरण*** *के बारे में कहते रहे। दिन के उजाले की तरह साफ है कि बहुत से देशों में बीसवीं सदी की साम्राज्यवादी इजारेदारियां अवश्य इंग्लैंड की तरह की ही परिघटना का निर्माण करेंगी । समस्त अग्रगामी देशों में हम* ***मजदूर वर्ग के नेताओं*** *और* ***उनके ऊपरी तबकों का*** *भ्रष्टाचार, रिश्वतखोरी, बुर्जुआ वर्ग की ओर पलायन देखते हैं – इसका कारण बुर्जुआ वर्ग की खैरात है, जो इन नेताओं को ''आमदनी वाले पद'' देता है,इन ऊपरी तबकों को अपने मुनाफे के बचे-खुचे अंश देता है ,सबसे कम पारिश्रमिक वाले और सबसे विषम कार्य का बोझ बाहर से लाये गये पिछड़े हुए मजदूरों के कन्धों की ओर सरका देता है,मजदूर जनसाधारण की तुलना में ''मजदूर वर्ग के अभिजातों '' के विशेषधिकार को बढ़ाता है''(लेनिन,बुर्जुआ वर्ग गद्दारों का कैसे उपयोग करता है,संकलित रचनाएं,प्रगति प्रकाशन,मास्को,1985,खण्ड-9, पृष्ठ-142-43,जोर मूल में)*

''... किसी भी अन्य देश से पहले पूंजीवाद ब्रिटेन में विकसित हुआ और एक लम्बे समय तक ब्रिटेन दुनिया का ''वर्कशाप'' था। इस अपवादिक, एकाधिकारी स्थिति ने ब्रिटेन के मजदूर अभिजातों यानि कुशल, अच्छी तनख्वाह पाने वाली अल्पसंख्या के लिये अपेक्षाकृत सहनीय जीवन स्थितियां पैदा की।'' (Lenin,Debate in Britain on libral policy ,CW Progress Pubisher , Moscow , Vol-18, p-360, अनुवाद हमारा)

''...हमारा अनुमान है कि विघटनवादी उद्योग की कुछ शाखाओं के अधिक तनख्वाह पाने वाले अल्पसंख्यक मजदूरों को गोलबंद करते हैं। सारी दुनिया में देखा गया है कि ये मजदूर अवसरवादी विचारों से चिपकते हैं।'' (Lenin ,the Working Class and its press, वही ,Vol-20,P-367, अनुवाद हमारा)

'' 'सर्वव्यापी मंथरवाद' ने स्वभावतः ही जनवाद की कतारों में कई सारे पेटी बुर्जुआ सहयात्रियों को आकर्षित किया; और भी, विशिष्ट पेटी बुर्जुआ स्थितियां और पेटी बुर्जुआ राजनीतिक दिशा एक निश्चित संस्तर वाले सांसदों, पत्रकारों और ट्रेड यूनियन अधिकारियों के लिए नियम बन गई; एक तरह की नौकरशाही और मजदूर वर्ग का अभिजात पैदा हो रहा था – लगभग खुले और स्पष्ट रूप में।'' (Lenin, Under a False Flag, वही, Vol-21,p-152 , अनुवाद हमारा)

''सबसे अनुकूल परिस्थितियों में भी, सबसे विकसित देशों में भी, बुर्जुआ जनवादी सभ्यता और संस्कृति के दशकों और कभी-कभी शताब्दियों के विकास के बाद भी ट्रेड यूनियनें पूंजीवादी समाजों में पांचवे हिस्से से ज्यादा उजरती मजदूरों को अपने में नहीं समेट पायीं। केवल एक ऊपरी छोटा हिस्सा सदस्य था और उनमें से केवल बहुत थोड़े ही लोगों को पूंजीपति वर्ग ने ललचाया और खरीद लिया कि वे पूंजीवादी समाज में मजदूरों के नेता बन जायें। अमेरिकी समाजवादियों ने इन लोगों को ''पूंजीपति वर्ग के मजदूर गुर्गे'' कहा है।'' (Lenin, Second All Russia Trade Union Congress, वही, Vol-28, P- 421,अनुवाद हमारा)

'' 11. विकसित पूंजीवादी देशों में क्रांतिकारी मजदूर आन्दोलन की एक मुख्य बाधा यह तथ्य है कि अपने उपनिवेशों और वित्त पूंजी से हासिल होने वाले अतिलाभ इत्यादि से इन देशों का पूंजीपति वर्ग मजदूर अभिजातों का एक अपेक्षाकृत बड़ा और ज्यादा स्थायी हिस्सा, जो पूरे मजदूर वर्ग की छोटी अल्पसंख्या होता है,पैदा करने में सफल होता है। इस अल्पसंख्या की नौकरी की स्थितियां ज्यादा बेहतर होती है तथा यह संकीर्ण शिल्पगत भावना और पेटी बुर्जुआ व साम्राज्यवादी पूर्वाग्रहों से सराबोर होता है।...'' (Lenin,Thesis on Comintern's Fundamental Task, वही, Vol-31,P-193-194, अनुवाद हमारा)

''...मजदूर अभिजात जो, बलिदान से डरता है,जो क्रांतिकारी संघर्ष के दौरान ''बहुत ज्यादा'' बदहाली से डरता है, वह पार्टी में नहीं आ सकता है। नहीं तो सर्वहारा की तानाशाही, खासकर पश्चिमी यूरोपीय देशों में नहीं आ पायेगी।'' (Lenin,Speech in Second Congress of Comintern,वही, Vol-31,P-248-249, अनुवाद हमारा)

इन उद्धरणों से (और आगे आने वाले उद्धरणों से भी) यह साफ है कि लेनिन अभिजात मजदूरों के रूप में किसे चिन्हित कर रहे हैं। यह मजदूरों की विशेषाधिकार प्राप्त श्रेणी है जो मजदूरों के ऊपरी संस्तर का निर्माण करती है। यह कुशल है,ज्यादा तनख्वाह पाती है। यह मजदूरों की अल्पसंख्या है। लेकिन निरपेक्ष तौर पर काफी बड़ी संख्या है। मजदूर आन्दोलन की समूची नौकरशाही-पार्टी व ट्रेड यूनियन पदाधिकारी,सांसद,पत्रकार इत्यादि इसका हिस्सा हैं।

II

अभिजात मजदूर वर्ग की उत्पत्ति का कारण

अभिजात मजदूर वर्ग की उत्पत्ति के कारणों को तलाश करते हुए लेनिन ने मुख्यतः तीन कारणों को रेखांकित किया। पहला और सबसे प्रमुख कारण साम्राज्यवाद और उसकी परजीविता थी। दूसरा कारण पूंजीवाद का लम्बे समय तक शांतिपूर्ण विकास व राजनीतिक स्वतंत्रता थी। तीसरा कारण पूंजीवाद द्वारा मजदूरों में जानबूझकर विभाजन करने की प्रवृत्ति थी।

जैसा कि पहले इंगित किया जा चुका है, अभिजात मजदूर वर्ग की इस परिधटना को लेनिन ने सबसे पहले 1907 की द्वितीय इंटरनेशनल की स्टुटगार्ट कांग्रेस के संदर्भ में चिन्हित किया जब इसमें कई सारे नेताओं ने औपनिवेशिक सवाल पर अवसरवादी रूख अपनाया था। इस समय लेनिन ने लिखा था :

*'' सम्पत्तिविहीन, पर काम न करने वाला वर्ग शोषकों को उखाड़ फेंकने में अक्षम है। केवल सर्वहारा वर्ग ही है जो पूरे समाज को पालता है, सामाजिक क्रांति ला सकता है। लेकिन वृहद औपनिवेशिक नीति के परिणामस्वरूप यूरोपीय सर्वहारा **अंशतः** अपने आप को ऐसी स्थिति में पाता है कि यह उसका श्रम **नहीं** है बल्कि उपनिवेशों से व्यवहारतः गुलाम देशी लोगों का श्रम है जो पूरे समाज को पाल रहा है। उदाहरणस्वरूप ब्रिटिश बुर्जुआ वर्ग भारत और अन्य उपनिवेशों के कई करोड़ लोगों से ज्यादा मुनाफा कमा रहा है बनिस्पत कि ब्रिटिश मजदूरों के। कुछ देशों में यह सर्वहारा को औपनिवेशिक शोवनिज्म से ग्रस्त करने का भौतिक और आर्थिक आधार बनता है। हो सकता है, यह केवल तात्कालिक परिघटना हो, लेकिन तब भी बुराई को साफ-साफ पहचाना जाना चाहिये और इसके कारणों को समझा जाना चाहिये जिससे कि सभी देशों के सर्वहारा को इस अवसरवाद के खिलाफ संघर्ष के लिये गोलबंद किया जा सके । इस संघर्ष की जीत तय है क्योंकि ''विशेषाधिकार सम्पन्न'' राष्ट्र पूंजीवादी राष्ट्रों का लगातार घटता हुआ हिस्सा हैं।'' (Lenin, The International Socialist Congress in Stuttgart, वही, Vol-13,P-77, अनुवाद हमारा ,जोर मूल में)*

ब्रिटिश मजदूर वर्ग के संदर्भ में लेनिन ने इसे फिर एकाधिक बार चिन्हित किया है कि उन्नीसवीं सदी के मध्य में विश्व बाजार पर अपनी एकाधिकारी स्थिति के कारण ब्रिटिश बुर्जुआ वर्ग अपने यहां एक बुर्जआकृत मजदूर वर्ग को पैदा करने में कामयाब रहा है जो कि अवसरवाद का आधार है। साथ ही लेनिन ने यह भी आशा व्यक्त की कि विश्व बाजार पर एकाधिकार टूटने के कारण ब्रिटिश मजदूर वर्ग की हालत खराब होगी और वहां अवसरवाद की जमीन ध्वस्त होगी। उन्होंने लिखा :

''... किसी भी अन्य देश से पहले विकसित हुआ और एक लम्बे समय तक ब्रिटेन दुनिया का ''वर्कशाप'' था। इस अपवादिक , एकाधिकारी स्थिति ने ब्रिटेन के मजदूर अभिजातों यानि कुशल, अच्छी तनख्वाह पाने वाले अल्पसंख्या के लिए अपेक्षाकृत सहनीय जीवन स्थितियां पैदा की।

''इसीलिये इस मजदूर अभिजात की कतारों के भीतर पेटी बुर्जुआ,शिल्प मानसिकता विद्यमान है, यह अपने वर्ग से अपने आप को अलग कर रहा है, उदारवादियों के पीछे चल रहा है तथा समाजवाद को तिरस्कारपूर्वक ''यूटोपिया'' कहता है।...

'' हाल के समय में ब्रिटेन का यह एकाधिकार बुरी तरह क्षतिग्रस्त हुआ है। जीवनयापन महंगा हो जाने के कारण पहले की सहनीय जीवन स्थितियों के मुकाबले अतीव अभाव पैदा हुआ है। वर्ग संघर्ष बड़े पैमाने पर तीव्र हो रहा है और इसके साथ अवसरवाद का आधार ,मजदूर वर्ग के भीतर उदारवादी मजदूर नीतियों के प्रसार का आधार समाप्त हो रहा है।''(Lenin,Debate in Britain on Liberal Labour Policy, वही, Vol-18, P-360, अनुवाद हमारा)

और भी,

'' ब्रिटिश सामाजिक जनवादियों , जिनके नेता हैरी क्वेल्च थे , के काम करने की ऐतिहासिक स्थितियां अत्यन्त विशिष्ट थीं । पूंजीवाद और राजनीतिक स्वतंत्रता के सबसे विकसित

देश में, ब्रिटिश बुर्जुआ ने (जिसने सत्रहवीं शताब्दी में ही कुछ-कुछ जनवादी तरीके से अपने एकछत्र राजतंत्र से हिसाब-किताब चुकता कर लिया था)उन्नीसवीं शताब्दी में ब्रिटिश मजदूर आन्दोलन में ***फूट*** *डालने में सफलता पायी। उन्नीसवीं शताब्दी के मध्य में विश्व बाजार पर ब्रिटेन का लगभग पूर्ण एकाधिकार था। इस एकाधिकार के कारण ब्रिटिश पूंजी द्वारा कमाये जाने वाले मुनाफे असमान्य रूप से ऊंचे थे । इसलिये यह संभव था कि इन मुनाफों के कुछ टुकड़े मजदूरों के अभिजात, कुशल फैक्ट्री मजदूरों के सामने फेंक दिये जायें।*

'' मजदूरों के इस अभिजात वर्ग ने जिसे कभी-कभी अच्छी मजदूरी मिल जाती थी, अपने आप को संकीर्ण, अपने हित देखने वाली, पेशा आधारित यूनियनों में बंद कर लिया और सर्वहारा की व्यापक आबादी से खुद को काट लिया जबकि राजनीति में इसने उदारवादी बुर्जुआ वर्ग का समर्थन किया। इसलिये आज तक अग्रणी मजदूरों में कहीं भी इतने उदारवादी नहीं हैं , जितने यहां हैं।

''लेकिन उन्नीसवीं सदी की अन्तिम चौथाई में चीजें बदलने लगीं। ब्रिटेन के एकाधिकार को अमेरिका, जर्मनी इत्यादि से चुनौती मिली। ब्रिटिश मजदूरो ने संकीर्ण पेटी-बुर्जुआ ट्रेड यूनियनवाद और उदारवाद का आर्थिक आधार ध्वस्त हो गया है। ब्रिटेन में एक बार फिर समाजवाद अपना सिर उठा रहा है, जनता तक पहुंच रहा है और लगभग समाजवादी बुद्धिजीवी वर्ग के अवसरवाद के बावजूद लगातार आगे बढ़ रहा है।''(Lenin,Harry Quelch, वही,Vol-19,P-370, अनुवाद हमारा, जोर मूल में)

लेनिन ने यह 1912-13 में लिखा। अभी एकाधिकारी पूंजीवाद वाले साम्राज्यवाद की सभी विशेषताएं उजागर होनी बाकी थी जो 1914 में प्रथम विश्व युद्ध की शुरूआत के बाद सामने आयीं। अभी तक तो यही लग रहा था कि विश्व बाजार में ब्रिटेन के एकाधिकार को चुनौती मिलने और अंततः उसके टूट जाने के बाद ब्रिटेन को मिलने वाला असामान्य मुनाफा बन्द हो जायेगा और उसे सामान्य मुनाफे से संतोष करना पड़ेगा। तब ब्रिटिश पूंजीपति वर्ग अपने मजदूरों को अतिरिक्त कुछ नहीं दे पायेगा और उसकी हालत तेजी से खराब होगी।

लेकिन बाद की घटनाओं ने दिखाया कि एकाधिकारी पूंजीवाद वाले आधुनिक साम्राज्यवाद ने इसकी उलटी दिशा ग्रहण की। उसने ब्रिटेन का असामान्य मुनाफा समाप्त नहीं किया बल्कि इस चीज को बाकी साम्राज्यवादी देशों में वितरित कर दिया। उन्नीसवीं सदी के मध्य में ब्रिटेन की जो दो विशेषताएं थीं – विश्व बाजार पर एकाधिकार तथा उपनिवेशों पर एकाधिकार , यही बाकी साम्राज्यवादी देशों की भी विशेषता बन गई। मुट्ठी भर साम्राज्यवादी देशों ने विश्व बाजार पर और उपनिवेशों पर एकाधिकार कायम कर लिया। इस एकाधिकार से उन्होंने अतिलाभ कमाया और अतिलाभ के एक छोटे हिस्से को बतौर घूस के मजदूरों के ऊपरी तबके के सामने फेंक दिया । इससे अभिजात मजदूर वर्ग की वही परिघटना इन साम्राज्यवादी देशों में भी पैदा हो गई जो उन्नीसवीं सदी के मध्य के बाद ब्रिटेन में पैदा हुई थी। इस सब को लेनिन ने इस रूप में सूत्रित कियाः

''उद्योग की विभिन्न शाखाओं में से किसी एक शाखा के ,अनेक देशों में से किसी एक देश , आदि के पूंजीपति जो बहुत ऊंचा इजारेदारी मुनाफा कमाते हैं, उससे उनके लिये आर्थिक दृष्टि से यह संभव हो जाता है कि वे मजदूरों के कुछ हिस्सों को, कुछ समय तक तो उनकी काफी बड़ी अल्पसंख्या को, रिश्वत दे सकें और उन्हें अन्य सभी उद्योगों अथवा राष्ट्रों के खिलाफ किसी एक उद्योग विशेष या राष्ट्र विशेष के बुर्जुआ वर्ग की तरफ मिला लें। दुनिया के बंटवारे के लिये साम्राज्यवादी राष्ट्रों के बीच विग्रहों के गहन होने के कारण यह चेष्टा और बढ़ती है। इस प्रकार साम्राज्यवाद तथा अवसरवाद के बीच वह सम्बन्ध पैदा होता है जो सबसे पहले और सबसे स्पष्ट रूप में इंगलैंड में इसलिये प्रकट हुआ कि वहां अन्य देशों की तुलना में साम्राज्यवादी विकास की विशेषताएं बहुत पहले ही दिखाई देने लगी थीं। ...''(लेनिन,साम्राज्यवाद, पूंजीवाद की चरम अवस्था,वही ,खण्ड-5,पृष्ठ-357)

और आगे,

''... यह बात अब बिलकुल साफ है कि पूरे मजदूर आन्दोलन में अन्तर्राष्ट्रीय पैमाने पर फूट पड़ चुकी है(दूसरा व तीसरा इंटरनेशनल)। ... इस विश्वव्यापी ऐतिहासिक परिघटना का आर्थिक आधार क्या है?

''इसका आधार पूंजीवाद की परिजीविता और ह्रास ही है, जो उसकी चरम ऐतिहासिक अवस्था ,अर्थात् साम्राज्यवाद की विशेषता है। जैसा कि इस पुस्तिका में सिद्ध किया गया है,

*पूंजीवाद ने अब **मुट्ठी भर** (दुनिया की आबादी के दसवें हिस्से से भी कम, अधिक से अधिक दरियादिली और उदारता से हिसाब लगाया जाय तब भी आबादी के पांचवें हिस्से से कम) असाधारण रूप से धनी ओर शक्तिशाली राज्यों को चुन लिया है, जो मात्र ''कूपन काटकर'' सारी दुनिया को लूट रहे हैं। युद्ध से पहले की कीमतों और युद्ध से पहले के बुर्जुआ आंकड़ों के अनुसार पूंजी के निर्यात से हर साल आठ-दस अरब फ्रांक की आमदनी होती है। अब तो यह आमदनी बेशक बहुत बढ़ गई है।*

*'' स्पष्ट है ऐसे विराट **अतिलाभ** में से (अतिलाभ इसलिए कि वह उस सारे लाभ के अतिरिक्त प्राप्त किया जाता है, जो पूंजीपति ''अपने'' देश के मजदूरों के शोषण से वसूल करते हैं) मजदूर नेताओं और अभिजात मजदूरों के ऊपरी स्तर को **घूस देकर अपनी ओर कर लेना संभव है** और उन्नत देशों के पूंजीपति यही कर रहे हैं, वे उन्हें हजारों तरह से प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष, खुले और छिपे तरीकों से घूस दे रहे हैं ।''(लेनिन, साम्राज्यवाद ,पूंजीवाद की चरम अवस्था की फ्रांसीसी,जर्मन संस्करण की भूमिका,वही पृष्ठ-212, जोर मूल में)*

यही बात एक बार फिर,

'' यहां हमें यह प्रश्न उठाना होगा : यूरोप में ऐसी प्रवृत्तियों के मजबूत होने का क्या कारण है और पश्चिमी यूरोप में यह अवसरवाद हमारे यहां की तुलना में क्यों अधिक मजबूत है? इसलिये कि अग्रगामी देशों में करोड़ों-करोड़ उत्पीड़ित लोगों की कीमत पर जीना संभव होने के जरिये अपनी संस्कृति का निर्माण किया तथा कर रहे हैं। इसीलिये कि इन देशों के पूंजीपति उससे कहीं ज्यादा प्राप्त कर रहे हैं, जो वे अपने देश के मजदूरों को लूट-खसोटकर मुनाफे के रूप में प्राप्त कर सकते थे।

''युद्ध से पहले हिसाब लगाया गया था कि तीन सबसे अमीर देशों ने ब्रिटेन, फ्रांस और जर्मनी ने अन्य आयों की तो बात ही क्या,अकेले पूंजी निर्यात से 8 -10 अरब फ्रांक की वार्षिक आय प्राप्त की है।

*''जाहिर है, इस खासी रकम में से चाहे पचास करोड़ ही सही मजदूर नेताओं तथा मजदूर अभिजातों **के आगे रोटी के टुकड़े फेंकने पर**,उन्हें सब तरह की रिश्वतें देने पर तो झोंके ही जा सकते हैं। सारा मामला रिश्वत बन कर रह जाता है । यह हजारों भिन्न-भिन्न तरीकों से किया जाता है: सबसे बड़े केन्द्रों में संस्कृति के स्तर को ऊपर उठाकर, शैक्षणिक संस्थाओं का निर्माण कर,सहकारिताओं के नेताओं के लिये,ट्रेड यूनियनों के नेताओं ,संसदों के नेताओं के लिये हजारों गद्दियों का निर्माण कर। यह सर्वत्र वहां होता है जहां आधुनिक पूंजीवादी संबन्ध हैं।*
अरबों के ये अति मुनाफे वह आर्थिक आधार हैं, जिस पर मजदूर आन्दोलन का अवसरवाद टिका हुआ है। हम अमेरिका ,ब्रिटेन और फ्रांस में अपरिमित रूप से मजबूत अवसरवादी नेता , मजदूर वर्ग की ऊपरी जमातें , मजदूर अभिजात पातें हैं ; वे कम्युनिस्ट आन्दोलन के अधिक सशक्त विरोधी सिद्ध होते है।...''(लेनिन, कम्युनिस्ट इंटरनेशनल की दूसरी कांग्रेस, वही, खण्ड-10, पृष्ठ-32-33, जोर हमारा)

इस मामले में बात केवल यहीं तक सीमित नहीं है कि मुट्ठी भर साम्राज्यवादी देश बाकी दुनिया की जनता को लूटकर अतिलाभ कमाते हैं और उसमें से कुछ टुकड़े अपने अभिजात मजदूरों की ओर फेंकै देते हैं। इसके साथ एक और बात होती है। खुद इन साम्राज्यवादी देशों में पिछड़े देशों और औपनिवेशिक देशों से मजदूर आते हैं जो इन साम्राज्यवादी देशों में सबसे घटिया और सबसे कम तनख्वाह वाले काम करते हैं । इनके पास आम जनवादी अधिकार भी नहीं होते। साम्राज्यवादी देशों के अभिजात मजदूर न केवल इनके साथ एकताबद्ध नही होते बल्कि इन्हें हिकारत की नजर से देखते हैं।

*''...पिछड़े देशों से आने वाले बहुत **कम तनख्वाह** पाने वाले मजदूरों का शोषण साम्राज्यवाद का खास चरित्र है। कुछ हद तक , धनी साम्राज्यवादी देशों की परजीविता इस शोषण पर टिकी होती है जो अपने मजदूरों के एक हिस्से को घूस देकर खरीद लेते हैं जबकि पूरी बेशर्मी और निर्बाध ढंग से वे ''सस्ते'' विदेशी मजदूरों का शोषण करते हैं।...''सभ्य''देशों में शोषक इस बात का भी फायदा उठाते हैं कि आयातित विदेशी मजदूरों के पास कोई अधिकार नहीं होते। इसे अक्सर जर्मनी में रूस से आयातित मजदूरों के मामले में देखा जा सकता है; स्विटजरलैंण्ड में इतावली मजदूर, फ्रांस में स्पेनी व इतावली इत्यादि।*

''शायद यह फायदेमंद होगा कि हम अपने कार्यक्रम में मुट्ठीभर सबसे धनी साम्राज्यवादी देशों, जो उपनिवेशों व कमजोर राष्ट्रों को लूटकर परजीवी के रूप में फलते-फूलते हैं, पर ज्यादा जोर दें और इसे ज्यादा स्पष्टता से चित्रित करें। यह साम्राज्यवाद की अत्यंत महत्वपूर्ण चारित्रिक विशेषता है। एक हद तक यह उन देशों में जो साम्राज्यवादी लूट के शिकार हैं तथा बड़े साम्राज्यवादियों द्वारा कुचल दिये जाने और बांट दिये जाने (जैसे कि रूस) में शक्तिशाली क्रांतिकारी आंदोलनों के पैदा होने में मदद करता है, दूसरी ओर इन देशों में जो साम्राज्यवादी तरीके से उपनिवेशों और विदेशी जमीनों को लूटते हैं तथा इस तरह (सापेक्षतः) जनता के एक बहुत बड़े हिस्से को साम्राज्यवादी लूट के बंटवारे में ***साझीदार*** *बना लेते हैं, उनमें विशाल क्रांतिकारी आंदोलन के पैदा होने को एक हद तक रोकते है।''(Lenin, Revision of party programme, वही, Vol-26,p-168-169, अनुवाद हमारा, जोर मूल में)*

यहां लेनिन अतिलाभ और अभिजात मजदूर परिघटना की एक अन्य विशेषता को चिन्हित करते हैं। वह है उपनिवेशों में क्रांतिकारी आन्दोलन का तीव्र हो जाना और साम्राज्यवादी देशों में इसका एक हद तक धीमा पड़ जाना। साम्राज्यवादी जो उपनिवेशों को लूटते हैं, उससे वहां बदहाली और ज्यादा बढ़ जाती है जो क्रांतिकारी आन्दोलन की गति को तेज कर देती है। इसके बरक्स इस लूट के कारण ही साम्राज्यवादी देशों के अभिजात मजदूरों की हालत में कुछ बेहतरी आ जाती है और जो यहां क्रांतिकारी आन्दोलन के ज्वार को एक हद तक रोक देती है। यहां कार्य कारण सम्बन्ध बेहद स्पष्ट है।

अभिजात मजदूरों की परिघटना के नकारात्मक उदाहरण के तौर पर लेनिन ने रूस का उदाहरण दिया कि किस तरह वहां परिस्थितियां विशेषाधिकार प्राप्त श्रेणी के और इसलिए अवसरवाद के पनपने के प्रतिकूल है। यह लेनिन की थीसिस को नकारात्मक तरीके से साबित करता था

''हमारे देश में आम परिस्थिति मजदूर समुदायों में ''समाजवादी'' अवसरवाद के पनपने के प्रतिकूल है। रूस के बुद्धिजीवियों, टुटपुंजिया लोगों , इत्यादि में हम अवसरवादी तथा सुधारवादी रंगों का एक पूरा सिलसिला देखते हैं। लेकिन राजनीतिक रूप से सक्रिय मजदूर समूह में वे तुच्छ संख्या में हैं । हमारे देश में अभिजात मजदूरों तथा दफ्तरी कर्मचारियों की श्रेणी बहुत छोटी है । हमारे यहां वैधता के प्रति अंध-श्रद्धा नहीं पैदा की जा सकती थी। ...'' (लेनिन, समाजवाद और युद्ध, वही, खण्ड-5,पृष्ठ-179)

लेनिन ने साम्राज्यवाद द्वारा कमाये जा रहे अतिलाभ को अभिजात मजदूर वर्ग परिघटना का प्रमुख कारण माना। लेकिन इसके साथ ही साथ उन्होंने दो और कारणों को भी इंगित किया। एक पूंजीवाद का ''शांतिपूर्ण'' विकास, ''सर्वव्यापी मंथरवाद'' और इसमें मौजूद राजनीतिक स्वतंत्रता इत्यादि तो दूसरा पूंजीपति वर्ग द्वारा मजदूरों को विभाजित करने की जान-बूझकर कोशिश। ये दोनों चीजें पहली के साथ-साथ और उसके साथ रची-गुंथी होती हैं।

''दूसरे इंटरनेशनल का पतन समाजवादी अवसरवाद का पतन है। यह मजदूर आन्दोलन के इसके पहले के ''शांतिपूर्ण'' विकास के एक उत्पाद के रूप में पैदा हुआ था। इस काल ने मजदूर वर्ग को वह सिखाया था कि वह संसद और कानूनी अवसरों जैसे महत्वपूर्ण साधनों का इस्तेमाल कैसे करे,कैसे व्यापक राजनीतिक संगठन, दूर-दूर फैला हुआ मजदूर प्रेस इत्यादि बनाये, दूसरी ओर इसके वर्ग-संघर्ष को नकारने की, वर्ग-सहयोग का पाठ पढ़ाने की प्रवृत्ति भी पैदा की, समाजवादी क्रांति को नकारने की, गैर-कानूनी संगठन के सिद्धान्त को नकारने की बुर्जुआ देशभक्ति स्वीकार करने की इत्यादि। मजदूर वर्ग के कुछ संस्तर (मजदूर आन्दोलन की नौकरशाही तथा मजदूर अभिजात, जो उपनिवेशों के शोषण तथा विश्व बाजार में अपने ''पितृदेश'' की विशेषाधिकार की स्थिति से होने वाले मुनाफे के एक हिस्सा पाते हैं) तथा समाजवादी पार्टियों के भीतर पेटी बुर्जुआ हमदर्द इस प्रवृत्ति के मुख्य वाहक तथा सर्वहारा पर बुर्जुआ प्रभाव के रास्ते साबित हुए हैं।'' (Lenin,conference of RSDLP Groups Abroad,वही ,Vol-21,P-161 ,अनुवाद हमारा)

''ब्रिटेन और अमेरिका में बुर्जुआ मजदूर नीति की खास प्रधानता और (तात्कालिक) ताकत का प्रमुख ऐतिहासिक कारण लम्बे समय से चली आ रही राजनीतिक स्वतंत्रता

*औौर दूसरे देशों के मुकाबले ज्यादा गहराई और व्यापकता वाले पूंजीवादी विकास की अपवादस्वरूप अनुकूल स्थितियां हैं। इन स्थितियों में मजदूर वर्ग के भीतर एक अभिजात वर्ग पैदा करने की प्रवृत्ति रही है जो अपने वर्ग से **गद्दारी** कर बुर्जुआ वर्ग के पीछे-पीछे चलता रहा है।''(Lenin, In America, वही,Vol-36 ,P-215, अनुवाद हमारा, जोर मूल में)*
और अन्त में,

''पूंजीवाद जान-बूझकर मजदूरों में विभाजन पैदा करता है जिससे कि मजदूर वर्ग के ऊपरी हिस्से के नगण्य मुट्ठी भर को बुर्जुआ वर्ग के इर्द-गिर्द लामबन्द किया जा सके । इस हिस्से के साथ संघर्ष अनिवार्य है। हम बिना संघर्ष के समाजवाद हासिल नहीं कर सकते।...'' (Lenin,Third All Russia Congress of Soviets, वही,Vol-26 P-469, अनुवाद हमारा)

III

अभिजात मजदूर वर्ग का राजनीतिक प्रभाव

मजदूर आन्दोलन पर इस अभिजात मजदूर वर्ग का बहुत बुरा राजनीतिक प्रभाव पड़ा। इसके प्रभाव का महत्व इसलिए ज्यादा बढ़ गया कि यही सर्वत्र नेतृत्व में काबिज था।

इस अभिजात मजदूर वर्ग ने बुर्जुआ वर्ग द्वारा फेंके गये टुकड़ों का उपभोग करते हुए मजदूर वर्ग के आन्दोलन को बुर्जुआ वर्ग की सेवा में लगा दिया। इसने मजदूर वर्ग के अन्तर्राष्ट्रवाद को तिलांजली देकर देशभक्ति का प्रचार किया और अंध-राष्ट्रवादी बन बैठा। इसने हर तरह से बुर्जुआ वर्ग की ताबेदारी की। इसके बिना प्रथम विश्व-युद्ध के संकट के समय साम्राज्यवादी बुर्जुआ अपने शासन को नहीं बनाये रख सकता था। इसीलिये लेनिन ने इसे मजदूर वर्ग में बुर्जुआ वर्ग का एजेन्ट घोषित किया।

इस अभिजात मजदूर वर्ग की मुख्य राजनीतिक भूमिका को चिन्हित करते हुए लेनिन कहते हैं :

*''बुर्जुआ रंग में रंगे मजदूरों या''अभिजात मजदूरों''का यह स्तर, जो रहन-सहन की दृष्टि से, कमाई की मात्रा की दृष्टि से और अपनी समूची विश्व दृष्टि के लिहाज से बिलकुल कूपमंडूक होता है, दूसरे इंटरनेशनल का मुख्य और हमारे समय में **बुर्जुआ वर्ग का** मुख्य **सामाजिक** (सैनिक नहीं) **आधार** बना हुआ है। कारण कि **मजदूर** आन्दोलन के भीतर ये लोग ही **बुर्जुआ वर्ग** के असली **दलाल**, पूंजीपति वर्ग के मजदूर गुर्गे, सुधारवाद व अंधराष्ट्रवाद के असली वाहक हैं। सर्वहारा वर्ग और बुर्जआ वर्ग के बीच गृहयुद्ध होने पर ये लोग अनिवार्य रूप से और बड़ी तादाद में बुर्जुआ वर्ग का साथ देते हैं ''कम्यूनार्डों'' के विरूद्ध वे ''वेसाई वालों''का साथ देते हैं ।''(लेनिन,साम्राज्यवाद पूंजीवाद की चरम अवस्था,वही,खण्ड-5,पृष्ठ-213, जोर मूल में)*

इसी बात को लेनिन और भी स्पष्ट रूप में कहते हैं:

*'' सामाजिक अंधराष्ट्रवादी हमारे **वर्ग शत्रु** हैं , मजदूर आन्दोलन के बीच बुर्जुआ हैं। वे मजदूरों की ऐसी श्रेणियों, ग्रुपों, परतों को प्रतिनिधित्व करते हैं, जिन्हें बुर्जुआ वर्ग **वस्तुगत रूप से** रिश्वत देता है (बेहतर वेतन,सम्मानजनक ओहदे,आदि के रूप में) और जो छोटी और कमजोर जातियों को लूटने और कुचलने में और पूंजीपतियों के लूट के माल के **बंटवारे के लिए** संघर्ष करने में **अपने** बुर्जुआ वर्ग की मदद करते हैं।' (लेनिन, हमारी क्रांति में सर्वहारा वर्ग के कार्यभार, वही,खण्ड -6,पृष्ठ -368,जोर मूल में)*

लेनिन यहां बहुत साफ शब्दों में अभिजात मजदूरों की इस श्रेणी को वर्ग शत्रु के रूप में चिन्हित करते हैं और कहते हैं कि यह क्रांति में वेसाई- वालों का साथ देगा। यह न केवल मजदूर आन्दोलन में अवसरवाद, सुधारवाद का वाहक है बल्कि सीधे-सीधे क्रांति का दुश्मन भी है जो क्रांति के समय ज्यादातर प्रतिक्रांतिकारियों का साथ देगा।

इन्हीं बातों को लेनिन एक अन्य जगह इस रूप में प्रस्तुत करते हैंः

*''दूसरे इंटरनेशनल के पूरे दौर में हर जगह सामाजिक जनवादी पार्टियों के भीतर क्रांतिकारी तथा अवसरवादी पक्षों के बीच संघर्ष चलता रहा। अनेक देशों (ब्रिटेन,इटली,हालैंड,बुल्गारिया) में इसी ढर्रे पर फूट पैदा हुई। किसी भी मार्क्सवादी को इसमें तनिक भी संदेह नहीं है कि अवसरवाद मजदूर आन्दोलन के भीतर बुर्जुआ नीति को अभिव्यक्त करता है, कि वह टुटपुंजिया वर्ग के हितों को और सर्वहारा जनसमुदायों,उत्पीड़ित जनसमुदायों के खिलाफ**''अपने''**बुर्जुआ वर्ग के साथ बुर्जुआकृत मजदूरों के एक बेहद छोटे हिस्से के संघ के हितों को अभिव्यक्त करता है।*

''उन्नीसवीं सदी के अंत की वास्तविक परिस्थिति ने बुर्जुआ वैधता के उपयोग को उसकी ताबेदारी में परिणत करते हुए मजदूर वर्ग के भीतर नौकरशाहों और रईसों की एक छोटी सी श्रेणी पैदा करते हुए और सामाजिक जनवादी पार्टियों की कतारों में अनेक टुटपुंजिया ''सहयात्रियों'' को खींचते हुए अवसरवाद को बेतरह बढ़ा दिया।

''युद्ध ने इस घटना प्रवाह को तेज कर दिया है और अवसरवाद को अंधराष्ट्रवाद में रूपान्तरित कर दिया है, अवसरवादियों तथा बुर्जुआ वर्ग के गुप्त गठजोड़ को खुले गठजोड़ में रूपान्तरित कर दिया है। इसके साथ ही सैनिक अधिकाारियों ने हर जगह मार्शल लॉ लागू कर दिया है और मजदूर जनता का मुंह बन्द कर दिया है,जिसके लगभग सभी पुराने नेता बुर्जुआ वर्ग की तरफ चले गये हैं।

''अवसरवाद तथा सामाजिक अंधराष्ट्रवाद का आर्थिक आधार एक ही हैः विशेषाधिकार प्राप्त उन मजदूरों तथा टुटपुंजियां की एक नगण्य श्रेणी के हित जो अपनी विशेषाधिकारपूर्ण स्थिति की, उन मुनाफों के, जो उनके ''अपने'' राष्ट्रीय बुर्जुआ वर्ग दूसरे राष्ट्रों की लूट से, अपनी महान शक्ति की हैसियत के लाभों से
प्राप्त करते हैं,तुच्छांशों पर अपने ''अधिकार'' की रक्षा कर रहे हैं।

''अवसरवाद व सामाजिक-अंधराष्ट्रवाद का वैचारिक-राजनीतिक अंतर्य एक ही हैः वर्ग संघर्ष के बजाय वर्ग सहयोग , संघर्ष के क्रांतिकारी तरीकों का त्याग, क्रांति के लिए ''अपनी'' सरकार की कठिनाइयों से फायदा उठाने के बजाय कठिनाई की स्थिति में उसकी सहायता ।...'' (लेनिन, समाजवाद और युद्ध, वही, खण्ड -5, पृष्ठ - 167-168 , जोर मूल में)

कहने की आवश्यकता नहीं कि क्रांति के दौरान यह वर्ग सहयोग सीधे-सीधे''वेसाई वालो'' के साथ सहयोग में रूपान्तरित हो जाता है।

ट्रेड यूनियन मोर्चे पर इस अभिजात वर्ग की प्रवृत्तियों को लेनिन ने इस रूप में चित्रित किया है :

*''... पश्चिम के मेंशेविकों ने वहां की ट्रेड-यूनियनों में ज्यादा मजबूत स्थिति प्राप्त कर ली है। वहां **ट्रेड यूनियनवादी, संकुचित मनोवृत्ति रखने वाला , स्वार्थी , निर्मम, लोलुप, दकियानूसी, ''अभिजात मजदूर वर्ग'' , जिसकी भावनाएं साम्राज्यवादी हैं, जो साम्राज्यवादियों के पैसों पर पलता है और जिसे साम्राज्यवादियों ने भ्रष्ट कर रखा है**, हमारे देश से कहीं अधिक शक्तिशाली स्तर के रूप में सामने आया है। यह बात निर्विवाद है। पश्चिमी यूरोप में गोम्पर्स जैसे लोगों, सर्वश्री जूहो, हेंडेरसन, मेरहीम, लेजियन तथा उनकी मंडली के खिलाफ लड़ना हमारे मेंशेविकों से, जो सामाजिक एवं राजनीतिक दृष्टि से **सर्वथा एक रूप** हैं, लड़ने से कहीं अधिक कठिन है। इस संघर्ष को बड़ी निर्ममता से चलाना होगा और हर हालत में उस हद तक पहुंचाना होगा-जैसा कि हमने उसे पहुंचा दिया था-जहां अवसरवाद और सामाजिक-अंधराष्ट्रवाद के सभी लाइलाज नेताओं का मुंह काला करके उन्हें ट्रेड-यूनियनों से बाहर कर दिया जाये।....''(लेनिन, ''वामपंथी'' कम्युनिज्म - एक बचकाना मर्ज, वही, खण्ड-9, पृष्ठ -287, जोर मूल में)*

उपरोक्त बातों को यदि एक बार फिर दुहरायें तो अभिजात मजदूर वर्ग अवसरवाद,सामाजिक साम्राज्यवाद, सामाजिक अंधराष्ट्रवाद का वाहक है, यह बुर्जुआ वर्ग का सामाजिक आधार है, यह मजदूर आन्दोलन में बुर्जुआ वर्ग का दलाल है, यह पूंजीपति का मजदूर गुर्गा है,यह मजदूर आन्दोलन में फूट के लिए जिम्मेदार है, यह क्रांति से गद्दारी करता है यह बुर्जुआ वर्ग का अंतिम संबल है और इसीलिये ज्यादा खतरनाक है क्योंकि इसके सहारे के बिना बुर्जुआ शासन संकट के समय टिका नहीं रह सकता, यह व्यापक सर्वहारा आबादी से खुद को काट लेता है तथा

उसे और उत्पीड़ित देश के मजदूरों को घृणा की दृष्टि से देखता है, यह संकुचित ट्रेड यूनियन मानसिकता, शिल्प मानसिकता से ग्रस्त होता है इत्यादि, इत्यादि। सबसे खतरनाक बात यह है कि यही मज़दूर आन्दोलन के नेतृत्व पर काबि़ज होता है और इसीलिए पूरे मज़दूर आन्दोलन को पतन के गर्त में ले जाता है।

IV

इस समस्या का समाधान क्या है?

तो फिर अभिजात मजदूर वर्ग की इस समस्या का समाधान क्या है? अभी तक यही मजदूर आन्दोलन के नेतृत्व में था तो यूं ही नहीं था। बड़ी-बड़ी फैक्ट्रियों में कार्य करने के कारण, ज्यादा उन्नत तकनीक के साथ जुड़े होने के कारण, ज्यादा शिक्षित-दीक्षित होने के कारण ही यह मजदूर आन्दोलन के नेतृत्व में था। यही अपनी बौद्धिक क्षमता में बुद्धिजीवी वर्ग के सबसे करीब था। यही मजदूर वर्ग का ''स्वाभाविक'' नेता था। यदि यही भ्रष्ट और पतित हो गया तो फिर मजदूर आन्दोलन का क्या भविष्य बचता है?

प्रश्न विकट था और लेनिन के विरोधियों ने ठीक इसी सवाल को लेनिन के सामने प्रस्तुत किया। उन्होंने लेनिन की अभिजात मजदूर वर्ग की थीसिस को,द्वितीय इंटरनेशनल के अवसरवाद के लेनिन के स्पष्टीकरण को ठीक इसी सवाल से चुनौती देने की कोशिश की । मार्तोव ने लिखा :

''....क्रांतिकारी सामाजिक-जनवाद के ध्येय की दिशा बहुत खराब और निराशापूर्ण होगी,यदि मजदूरों के वे ग्रुप जो मानसिक विकास के मामले में 'बुद्धिजीवी समुदाय' के सबसे निकट हैं तथा सबसे ज्यादा योग्यता प्राप्त हैं नियतिनिर्दिष्ट रूप में इस समुदाय से अवसरवाद की ओर पहुंच जाय ...''

*इस पर लेनिन ने टिप्पणी की : ''मूर्खतापूर्ण शब्द ''नियतिनिर्दिष्ट'' और हाथ की सफाई के जरिये **इस तथ्य से किनाराकशी कर ली जाती है** कि मजदूरों के **कतिपय** ग्रुप तो अवसरवाद की ओर और साम्राज्यवादी बुर्जुआ वर्ग की ओर **पहुंच भी चुके हैं!** संगठन समिति के अपने कूटतर्क ठीक इसी तथ्य से **किनाराकशी** करना चाहते हैं ।...'' (लेनिन, साम्राज्यवाद तथा समाजवादी आन्दोलन में फूट,वही , खण्ड-6,पृष्ठ-216-217, जोर मूल में)*

लेनिन ने यहां जोर दिया कि बात भविष्य के प्रति आशा या निराशा की नहीं है,बात सबसे पहले तथ्य को स्वीकार करने की है। तथ्य से किनाराकशी करके झूठे आशावाद से कुछ नहीं हासिल होगा। इसके बदले तथ्य को स्वीकार कर ही रास्ते की तलाश की जा सकती है । और तथ्य यह है कि मजदूरों का ऊपरी तबका , अभिजात मजदूर वर्ग भ्रष्ट हो चुका है।

ऐसा नहीं है कि लेनिन मजदूरों के इस अग्रणी तबके, सबसे ज्यादा तनख्वाह पाने वाले मजदूर वर्ग की भूमिका से अनजान थे। खुद रूसी क्रांति (1905-07) का सार-संकलन करते हुए उन्होंने 1917 में यह बात कही थी(वह भी उपरोक्त बात कहने के तीन महीने के भीतर):

''रूसी क्रांति का इतिहास हमें बताता है कि उजरती मजदूरों का ठीक हरावल दस्ता ही, उनके चुने हुए तत्व ही सबसे अधिक दृढ़ता और सबसे अधिक आत्मबलिदान के साथ लड़े। जितना ही बड़ा कारखाना था, उतनी ही दृढ़ और साल में उतनी ही बार अधिक हड़तालें हुईं। जितना ही बड़ा शहर था, संघर्ष में उतनी ही बड़ी भूमिका सर्वहारा ने अदा की। तीन सबसे बड़े शहरों -पीटर्सबर्ग,रीगा और वारसा - में, जहां सबसे अधिक वर्ग चेतन और सबसे अधिक बहुसंख्य मजदूर रहते हैं, कुल मजदूरों की संख्या के अनुपात में हड़तालियों की संख्या, देहाती क्षेत्रों की बात ही क्या, अन्य सभी शहरों के हड़तालियों की संख्या से भी बेहिसाब अधिक थी।

''रूस में - संभवतः दूसरे पूंजीवादी देशों में भी-धातुकर्मी सर्वहारा वर्ग का हरावल दस्ता है। और यहीं हमें निम्नांकित शिक्षाप्रद तथ्य देखने को मिलते है:1905 में हड़तालियों की संख्या रूस के मिल मजदूरों की कुल संख्या की 160 फीसदी थी जबकि उसी साल हर सौ ***धातुकर्मियों*** *के पीछे 320 हड़ताली थे! यह हिसाब लगाया गया है कि 1905 में हर रूसी मिल मजदूर ने हड़ताल के कारण औसतन 10 रूबल- युद्ध से पहले के विनिमय दर के अनुसार लगभग 26 फ्रांक-खोये, मानो यह रकम उसने संघर्ष के लिए भेंट कर दी। किन्तु यदि हम केवल धातुकर्मियों को ही लें,तो पायेंगे कि उनके नुकसान की औसत रकम* ***तीन गुना अधिक*** *थी! अगली कतार में मजदूर वर्ग के सर्वोत्तम तत्व मार्च कर रहे थे, लड़खड़ाते को संभालते हुए, सोते को जगाते हुए और कमजोरों को हिम्मत बंधाते हुए।....*

'' 1905 के हड़ताल संघर्ष में रूस के धातुकर्मियों और सूती मिल मजदूरों के अनुपात की और बारीकी से जांच करें। धातुकर्मी सर्वहारा वर्ग में सबसे अधिक मजदूरी पाने वाले, सबसे अधिक वर्ग-चेतन और सबसे अधिक सुसंस्कृत हैं। सूती मिल मजदूर, रूस में जिनकी संख्या 1905 में धातुकर्मियों से ढाई गुना अधिक थी, अत्यन्त पिछड़ा हुआ और बहुत कम मजूरी पाने वाला मजदूर समुदाय है, जिसमें से अत्यधिक लोगों ने देहाती क्षेत्रों में रहने वाले अपने किसान रिश्तेदारों से अभी अंतिम रूप से संबन्ध-विच्छेद भी नहीं किया है। यहां हमें निम्नलिखित बहुत ही महत्वपूर्ण परिस्थिति का सामना करना पड़ता है।

''धातुकर्मियों की 1905 के पूरे साल में हुई हड़तालों से प्रकट होता है कि उनमें आर्थिक हड़तालों की अपेक्षा राजनीतिक हड़तालों की प्रमुखता रही, यद्यपि यह प्रमुखता साल के शुरू में अभी प्रायः उतनी अधिक नहीं थी, जितनी साल के अन्त में थी। इसके विपरीत हम सूती मिल मजदूरों में यह देखते हैं कि 1905 के शुरू में उनकी हड़तालों में आर्थिक हड़तालों की प्रमुखता थी और केवल साल के अंत में जाकर ही उनका स्थान राजनीतिक हड़तालों की प्रमुखता ने लिया। इससे यह बहुत स्पष्ट निष्कर्ष निकलता है कि केवल आर्थिक संघर्ष , केवल अपनी हालातों पर प्रत्यक्ष और तत्काल सुधार के लिये संघर्ष ही शोषित जनता के अत्यन्त पिछड़े हुए हिस्सों को प्रोत्साहित कर सकता है, उन्हें असली शिक्षा देता है और - एक क्रांतिकारी दौर में - चन्द महिनों के भीतर ही राजनीतिक योद्धाओं की एक फौज में बदल देता है।

'' अवश्य ही, ऐसा परिवर्तन लाने के लिये यह जरूरी है कि मजदूरों का हरावल दस्ता वर्ग संघर्ष को ऐसा संघर्ष नहीं समझे , जो ऊपरी स्तर के चन्द लोगों के हित में किया जाता है , जैसा कि सुधारवादियों ने अनेक-अनेक बार मजदूरों को विश्वास दिलाने की कोशिश की है;बल्कि सर्वहारा वर्ग शोषितों के बहुसंख्य भाग के वास्तविक हरावल दस्ते के रूप में सामने आये और उस बहुसंख्य भाग को संघर्ष में खींचे, जैसा कि 1905 में रूस में हुआ और जैसा कि यूरोप की आगामी सर्वहारा क्रांति में अवश्य होना चाहिये और निस्सन्देह होगा।''(लेनिन, 1905 की क्रांति का भाषण, वही , खण्ड-6 , पृष्ठ- 234-236, जोर मूल में)

यानि 1905 की क्रांति में रूस में ज्यादा तनख्वाह पाने वाले धातुकर्मियों ने एक हरावल की भूमिका अदा की और कम तनख्वाह पाने वाले कपड़ा मजदूरों को अपने साथ खींचा। 1917 की क्रांति में फिर यही हुआ।

तब फिर ऐसे में क्या किया जाय जब खुद यही हरावल दस्ता अभिजात मजदूर वर्ग में रूपान्तरित हो जाय और भ्रष्ट तथा पतित हो जाय? इस विकट स्थिति से बाहर निकलने का रास्ता क्या है?

यदि अभिजात मजदूर वर्ग का एवं तद्जन्य अवसरवाद का वस्तुगत, भौतिक-आर्थिक आधार मौजूद है, अतिलाभ के रूप में तो इस स्थिति से निकलने का वस्तुगत रास्ता इस आधार का समाप्त होना है। और वस्तुतः एंगेल्स से लेकर लेनिन तक ने यह आकलन व्यक्त किया कि देर-सबेर इजारेदारियां टूटेंगी या साम्राज्यवादी देशों का संकट गहरायेगा तथा इससे जनता की बदहाली बढ़ेगी। इससे अभिजात मजदूरों की भी स्थिति खराब होगी और उनका विशेषाधिकार समाप्त होगा। यह इन्हें अवसरवाद से मुक्त करेगा और वे क्रांति में खिंच कर आयेंगे। पहले दिये गये उद्धरणों में लेनिन बारंबार इंग्लैंड की इजारेदारी टूटने और वहां समाजवाद के पुनर्जीवन की बात करते हैं। यह बात करते हुए लेनिन एंगेल्स की बात को ही दुहरा रहे होते हैं। एंगेल्स ने 1885 में कहा था :

''सच्चाई यह है कि -इंग्लैंड की औद्योगिक इजारेदारी की अवधि में अंग्रेज मजदूर वर्ग इस इजारेदारी के लाभों में कुछ हद तक भागीदार रहा है। ये लाभ उनके बीच अत्यंत असमान रूप से विभाजित हुएः विशेषाधिकार प्राप्त अल्पसंख्या ने अधिकांश लाभ हथिया लिये, इसके बावजूद व्यापक समुदाय को भी कम से कम यदा-कदा हिस्सा मिलता रहा। और यही कारण है कि ओवेनवाद के अवसान के बाद इंग्लैंड में समाजवाद नहीं रहा। इंग्लैंड की औद्योगिक इजारेदारी के भंग होने से अंग्रेज मजदूर वर्ग वह विशेषाधिकार प्राप्त स्थिति खो बैठेगा ,वह - और बिना किसी अपवाद के, विशेषाधिकार प्राप्त तथा अग्रणी अल्पसंख्या भी - अपने को उसी स्तर पर पायेगा जहां विदेशों में उसके साथी मजदूर है। और यही कारण है कि इंग्लैंड में समाजवाद फिर प्रकट होगा।''(एंगेल्स, 'इंग्लैंड में मजदूर वर्ग की दशा' पुस्तक की भूमिका, मार्क्स -एंगेल्स की संकलित रचनाएं, प्रगति प्रकाशन , मास्को,1978, खण्ड-3 भाग -2 , पृष्ठ-356)

लेकिन हम जानते हें कि ऐसा नहीं हुआ और आधुनिक साम्राज्यवाद की उत्पत्ति के साथ इंग्लैंड का यह विशेषाधिकार कुछ और देशों तक विस्तारित हो गया। लेकिन साम्राज्यवादी देशों द्वारा बाकी दुनिया को लूटकर अतिलाभ कमाना यूं ही निर्वाध नहीं चलता रह सकता था। इसे संकटग्रस्त होना था - खासकर आपसी तीव्र प्रतियोगिता और युद्ध के चलते । इस युद्ध की विभीषिका इन देशों के सभी मजदूरों पर पड़नी थी। इससे इनके अभिजात मजदूर भी बच नहीं सकते थे। इस तरह उनके पुनः उग्र होने का रास्ता खुलता था। इस सम्बन्ध में लेनिन ने लिखाः

''इंग्लेंड की तरह फ्रांस में भी विजयी साम्राज्यवाद ने न केवल कुछ छोटे पूंजीपतियों को धनी बनाया है, बल्कि यह मजदूरों के ऊपरी हिस्से को भी, मजदूर वर्ग के अभिजात को भी कुछ भीख देने में सफल रहा है- उपनिवेशों और अन्य को लूटने-खसोटने से मिलने वाले साम्राज्यवादी खिराज में से कुछ टुकड़े इसकी ओर फेंक कर।

''लेकिन युद्ध से पैदा हुआ संकट इतना गंभीर था कि विजयी देशों में भी मेहनतकश जनता भयानक बदहाली में अनिवार्यतः जीने को मजबूर है। इसी से कम्युनिज्म का तेज विकास हो रहा है तथा सोवियत सत्ता व तीसरे इंटरनेशनल की ओर सहानुभूति बढ़ रही है।''(Lenin,ToComrade Loriot ..., वही ,Vol-30,P-85 , अनुवाद हमारा)

लेकिन वस्तुगत गति के अलावा आत्मगत तौर पर इस समस्या के समाधान के लिए कोई कार्यनीति अपनाई जानी थी । और यह कार्यनीति तिहरी थीः अभिजात मजदूर वर्ग तथा अवसरवादी नेताओं के खिलाफ तीखा संघर्ष; पुराने नेताओं को नये नेताओं से प्रतिस्थापित करना तथा अभिजात मजदूरों से नीचे के मजदूरों को,अकुशल मजदूरों को, मजदूर जनसाधारण को गोलबंद करना ।

अभिजात मजदूर वर्ग तथा अवसरवादी नेताओं के खिलाफ तीखे संघर्ष के बारे में लेनिन कहते हैंः

'' मजदूर जनसाधारण के साथ अटूट सम्बन्ध,उनके बीच निरंतर आन्दोलन करने, प्रत्येक हड़ताल में भाग लेने,जनसाधारण की सारी मांगों के प्रति संवेदनशीलता प्रकट करने की क्षमता - यह है कम्युनिस्ट पार्टियों के लिए मुख्य वस्तु, खासतौर पर ब्रिटेन जैसे देश में, जहां अब तक (जैसा कि प्रसंगतःसारे साम्राज्यवादी देशों में होता है) समाजवादी आन्दोलन तथा आमतौर पर मजदूर आन्दोलन में शिरकत मुख्यतया मजदूरों के सबसे ऊपरी संकीर्ण दायरे, मजदूर अभिजात वर्ग के प्रतिनिधियों तक सीमित रही है, जिनका बड़ा भाग ऊपर से नीचे तक, असाध्य रूप से सुधारवाद से ओतप्रोत है और बुर्जुआ तथा साम्राज्यवादी पूर्वाग्रहों का बंदी है। इस श्रेणी के विरूद्ध संघर्ष किये बिना, मजदूरों के बीच उनकी सारी प्रतिष्ठा को नष्ट किये बिना, जनसाधारण को इस श्रेणी के पूर्ण बुर्जुआ भ्रष्टीकरण के बारे में कायल किये बिना किसी गंभीर कम्युनिस्ट मजदूर आन्दोलन का कोई सवाल ही नहीं उठ सकता। यह बात ब्रिटेन,फ्रांस,अमेरिका तथा जर्मन पर

भी लागू होती है। ''(लेनिन, सिल्विया पैंकहर्स्ट को पत्र, वही, खण्ड-9, पृष्ठ-128-129)

और आगे,

''...आधुनिक (बीसवीं सदी के) साम्राज्यवाद ने कुछ उन्नत देशों के लिए इजारेदाराना-विशेषाधिकारपूर्ण स्थिति बना दी, जिससे दूसरे इंटरनेशनल में हर जगह एक विशेष ढंग के गद्दार,अवसरवादी,सामाजिक-अंधराष्ट्रवादी नेता पैदा हो गये, जो केवल अपने पेशे के अभिजात मजदूर वर्ग के केवल अपने हिस्से के हितों का समर्थन करते हैं। अवसरवादी पर्टियां ''जनसाधारण'' से, यानि आम मेहनतकश लोगों के व्यापक स्तरों से,उनकी बहुसंख्या से, सबसे कम मजदूरी पाने वाले मजदूरों से अलग हो गयीं। जब तक इस बुराई के खिलाफ संघर्ष नहीं किया जाता, जब तक अवसरवादी, सामाजिक गद्दार नेताओं का भंडाफोड़ नहीं किया जाता, उन्हें ज़लील करके निकाला नहीं जाता, तब तक क्रांतिकारी सर्वहारा का विजयी होना असंभव है; तीसरे इंटरनेशनल ने इसी नीति का पालन करना शुरू किया है। ''(लेनिन,''वामपंथी'' कम्युनिज्म-एक बचकाना मर्ज, वही , खण्ड-9 पृष्ठ-275-276)

न केवल अवसरवादी नेताओं के खिलाफ संघर्ष किया जाना चाहिये और उन्हें जलील कर बाहर निकाला जाना चाहिये बल्कि उन्हें ऐसे नये नेताओं से प्रतिस्थापित किया जाना चाहिये जो जनसाधारण से गहराई से जुड़े हों। लेनिन लिखते हैं :

''अनुभवी सुधारवादी और ''मध्यमार्गी '' नेताओं को नौसिखुओं से प्रतिस्थापित करना कोई ऐसा सवाल नहीं है जो किसी एक देश की खास स्थितियों से संबन्धित हो। यह एक आम सवाल है जो हर सर्वहारा क्रांति में पैदा होता है और इसीलिए ''कम्युनिस्ट इंटरनेशनल के आधारभूत कार्यभार'' के तहत सूत्रित किया गया है और इसका स्पष्ट जवाब दिया गया है । बिन्दु 8 में हम पढ़ते हैं : '' सर्वहारा अधिनायकत्व के लिए तैयारी का मतलब केवल सभी सुधारवाद के बुर्जुआ चरित्र को स्पष्ट करना नहीं है,...इसका यह भी मतलब है कि निश्चित तौर पर सभी प्रकार के सर्वहारा संगठनों में पुराने नेताओं को कम्युनिस्टों से बदल दिया जाय - न केवल राजनीतिक बल्कि ट्रेडयूनियन, कोआपरेटिव, शैक्षिक इत्यादि सभी में।...मजदूर अभिजात या बुर्जआकृत मजदूरों के इन प्रतिनिधियों को अभी तक के मुकाबले सौ गुना ज्यादा निर्भीकता से उनके सभी पदों से हटा देना चाहिये और उन्हें ऐसे मजदूरों से प्रतिस्थापित कर देना चाहिये जो भले ही अनुभवहीन हों लेकिन जो शोषित जन समूह से जुड़े हुए हें तथा शोषकों के खिलाफ संघर्ष में जिन्हें इनका विश्वास हासिल है । सर्वहारा अधिनायकत्व के लिए यह जरूरी होगा कि राज्य के सबसे जिम्मेदार पदों पर ऐसे अनुभवहीन मजदूरों को नियुक्त किया जाय अन्यथा मजदूरों की सरकार नपुंसक होगी और उसे जन समूहों का समर्थन हासिल नहीं होगा।''(Lenin, On Struggle Within Italian Socialist Party, वही Vol-31, P-388 अनुवाद हमारा)

इन दोनों बातों के अलावा लेनिन ने जो सबसे ज्यादा जोर दिया वह यह कि अभिजात मजदूरों के नीचे के मजदूर जनसाधारण को गोलबन्द किया जाय,उन मजदूरों को जो अभी तक संगठित नहीं किये जा सके हैं। इनको संगठित करना अपेक्षाकृत ज्यादा मुश्किल है लेकिन इसे किया जाना चाहिये। इसके लिए लेनिन ने मजदूर जनसाधारण में और ज्यादा पैठने की बात की । लेनिन ने यहां भी एंगेल्स से सूत्र ग्रहण किये थे ।

''1889 में इंग्लैंड में अप्रशिक्षित, गैर-हुनरमंद,साधारण मजदूरों (गैस कर्मियों, गोदी-मजदूरों,आदि) का किशोर ताजा, नवीन, क्रांतिकारी भावना से युक्त आन्दोलन आरंभ हुआ। एंगेल्स को इससे हर्ष हुआ। उन्होंने मार्क्स के बेटी ''टस्सी '' की, जिन्होने इन मजदूरों के बीच आन्दोलन चलाया था, भूमिका का उल्लासपूर्वक उल्लेख किया था। ...'' (लेनिन,जोर्गे की चिट्ठियों के रूसी अनुवाद की भूमिका, वही , खण्ड-3, पृष्ठ -343)

*''एंगेल्स **पुरानी** ट्रेड-यूनियनों की ''बुर्जुआ मजदूर पार्टी'', विशेष सुविधा- प्राप्त अल्प संख्या और '' **निम्न** जनसमुदाय'', वास्तविक बहुसंख्या के बीच अंतर करते हैं और इस बहुसंख्या से, जिसे '' बुर्जुआ प्रतिष्ठा'' की छूत **नहीं** लगी है। अपील करते हैं। मार्क्सवादी कार्यनीति का सार यही है।*

*''यह हिसाब हम नहीं लगा सकते – और न कोई लगा सकता है – कि सर्वहारा वर्ग का कितना हिस्सा सामाजिक अंधराष्ट्रवादियों और अवसरवादियों का अनुसरण कर रहा है तथा करेगा। यह तो केवल संघर्ष ही दिखायेगा, यह मात्र समाजवादी क्रांति ही तय करेगी। परन्तु हम यह यकीनन जानते हैं कि साम्राज्यवादी युद्ध में ''पितृभूमि की रक्षा'' मात्र अल्पसंख्या का **प्रतिनिधित्व करते हैं**। और इसीलिये हमारा कर्तव्य है – यदि हम समाजवादी बने रहना चाहते – कि हम वास्तविक जनसाधारण के पास और **नीचे** और **गहराई** में पहुंचें; इसमें ही अवसरवाद के विरूद्ध संघर्ष का सारा अर्थ और सारी अंतर्वस्तु निहित है। यह बात उजागर कर कि अवसरवादी तथा सामाजिक–अंधराष्ट्रवादी वस्तुतः जनसाधारण के हितों के साथ गद्दारी कर रहे हैं और उन्हें बेच रहे हैं, कि वे मजदूरों की एक अल्पसंख्या की अस्थाई विशेष सुविधाओं की रक्षा कर रहे हैं, कि वे बुर्जुआ विचारों तथा प्रभावों के वाहक हैं, कि वे दरअसल बुर्जुआ वर्ग के साथी तथा दलाल हैं, हम जनसाधारण को अपने वास्तविक राजनीतिक हितों को पहचानना, साम्राज्यवादी युद्धों और साम्राज्यवादी विराम संधियों के लंबे और पीड़ादायी उतार–चढ़ावों के दौरान समाजवाद के लिये संघर्ष करना सिखाते हैं।*

'' जनसाधारण को अवसरवाद के साथ संबन्ध–विच्छेद की अपरिहार्यता तथा आवश्यकता समझाना, अवसरवाद के विरूद्ध निर्मम संघर्ष चलाकर उन्हें क्रांति के लिए – शिक्षित–दीक्षित करना, राष्ट्रवादी–उदारवादी श्रम नीति के सारे घिनौनेपन को छुपाने के लिए नहीं, वरन उसका पर्दाफाश करने के लिए युद्ध के अनुभवों को ध्यान में रखना–यह है विश्व मजदूर आन्दोलन में एक मात्र मार्क्सवादी लाईन।''(लेनिन , साम्राज्यवाद तथा समाजवादी आन्दोलन में फूट, वही, खण्ड–6, पृष्ठ– 227-228, जोर मूल में)

इन्हीं बातों की ओर जोर देकर लेनिन इस तरह प्रस्तुत करते हैं :

*'' 13. स्वतंत्र और लांगेवादी यह नहीं समझते और न ही जनसमूह के सामने यह स्पष्ट करते हैं कि विकसित देशों के साम्राज्यवादी अतिलाभ ने उनके लिए संभव बनाया है (और अभी बनाता है) कि वे सर्वहारा के ऊपरी संस्तर को **खरीद सकें**, कुशल मजदूरों को एक विशेषाधिकार प्राप्त हिस्सा पैदा करने के लिए उनके सामने अतिलाभ (उपनिवेशों की लूट तथा कमजोर देशों के वित्तीय शोषण से प्राप्त) से कुछ टुकड़े फेंक सकें।*

*''इस बुराई का भंडाफोड़ किये बिना, ट्रेड यूनियन नौकरशाही और पेटी बुर्जुआ गिल्डवाद की सभी अभिव्यक्तियों के खिलाफ संघर्ष किये बिना, मजदूर वर्ग के अभिजात के खिलाफ संघर्ष किये बिना, क्रांतिकारी पार्टी से इस तरह की भावना से सराबोर लोगों को निर्दयतापूर्वक निकाल बाहर किये बिना, **निचले संस्तर**, **जनसमूहों** के ज्यादा से ज्यादा व्यापक हिस्सों,शोषितों के वास्तविक **बहुसंख्यों** को संबोधित किये बिना, इन सबको किये बिना , सर्वहारा तानाशाही की कोई बात नहीं की जा सकती।''(Lenin,Draft [or Thesis] Of RCP'S Reply to the Letter of the Indepenent Social Democratic Party of Germaney) वही,Vol -30, P-338-339, अनुवाद हमारा,जोर मूल में)*

और भी,

''...बुर्जुआ वर्ग को उखाड़ फेंकने के लिए बिलकुल शुरूआती अर्थ में भी, कोई भी तैयारी संभव नहीं यदि इस संस्तर के खिलाफ तुरंत, क्रमबद्ध, व्यापक और खुला संघर्ष नहीं छेड़ा जाता ,यह संस्तर जैसा कि अनुभव ने दिखाया है, क्रांति के बाद श्वेतगार्डों के लिए कई सारे रंगरूट प्रदान करता है। तीसरे इंटरनेशनल से जुड़ी हुई सभी पार्टियों को किसी भी कीमत पर इन नारों को लागू करना होगा : '' जन समूह की गहराई में उतरो '', जन समूहों से ज्यादा नजदीकी सम्बन्ध बनाओ''– जन समूहों से मतलब उन लोगों से है जो मेहनत करते हैं और पूंजी द्वारा शोषित हैं, खासकर वे जो सबसे कम शिक्षित व संगठित हैं, जो सबसे ज्यादा उत्पीड़ित और संगठन के लिए सबसे कम तैयार हैं।''(Lenin,Thesis on Comintern's Fundamentals Task, वही, Vol-31P-193 -194, अनुवाद हमारा)

कुल मिलाकर यह थी अभिजात मजदूर वर्ग के संदर्भ में लेनिन की कार्यनीति जिसका सारतत्व था – अभिजात मजदूर वर्ग और अवसरवादी नेताओं के खिलाफ अविराम संघर्ष तथा उनका पर्दाफाश; पुराने नेताओं का पर्दाफाश कर उनको निकाल बाहर करना और उनको नये नेताओं से प्रतिस्थापित करना जो जनसाधारण से गहराई से जुड़े हों; जनसाधारण की गहराई में पैठना, ऊपरी संस्तर के नीचे के जनसाधारण को संगठित करना जिन्हें संगठित करना ज्यादा कठिन है। तीसरे इंटरनेशनल ने इसी कार्यनीति पर अमल किया था।

V

आज की दुनिया और भारत

लेनिन ने अभिजात मजदूर वर्ग के संदर्भ में जब अपनी उपरोक्त कार्यनीति प्रस्तुत की थी तब से दुनिया मूलतः वही रहते हुए भी किंचित बदली भी हैं। अभिजात मजदूर वर्ग की समस्या मूलतः वही रहते हुए भी उसने कुछ अन्य आयाम भी ग्रहण किये हैं।

इसी तरह लेनिन के जमाने में उपनिवेशों में कोई अभिजात मजदूर वर्ग नहीं था। लेकिन आज पहले के औपनिवेशिक देशों में, जो द्वितीय विश्व युद्ध के बाद अलग-अलग समय पर आजाद हुए हैं, भी एक अभिजात मजदूर वर्ग विद्यमान है। इसका आर्थिक आधार वह नहीं है जो साम्राज्यवादी देशों के अभिजात मजदूर वर्ग का था और है।

आज इस सम्बन्ध में कार्यनीति तय करते हुए हमें इन दोनों का जायजा लेना होगा।

साम्राज्यवादियों के आपसी संकट के बढ़ने के साथ इन देशों के मजदूरों की तवाही,और इसके कारण वहां क्रांतिकारी उभार पैदा होने के बारे में लेनिन की भविष्यवाणी सच भी सावित हुई और गलत भी । लेनिन की उपरोक्त बातों के दशक भर के भीतर समूचा साम्राज्यवादी विश्व भयानक मंदी में डूब गया जिसकी शुरूआत 1929 में हुई। इसने वहां अकथनीय तबाही ढायी और बेहद दरिद्रता को जन्म दिया। इसीलिये इन सभी देशों में कम्युनिस्ट आन्दोलन तेजी से बढ़े और जनता का क्रांतिकारीकरण हुआ।

यह महामंदी खत्म नहीं हुई बल्कि इसने अंततः विश्व युद्ध को जन्म दिया जिससे दुनिया में और ज्यादा तबाही फैली। यूरोप तो इससे ध्वस्त ही हो गया।

मंदी और द्वितीय विश्व युद्ध ने न केवल राष्ट्रीय मुक्ति युद्धों को तेज किया बल्कि इसने खुद साम्राज्यवादी देशों में क्रांतिकारी परिस्थितियां पैदा
कर दी। युद्ध के बाद यदि पूर्वी यूरोप जनता के जनवादी गणराज्यों के रूप में दुनिया के नकशे पर आया तो फ्रांस ,इटली और यूनान में कम्युनिस्ट पार्टियां सत्ता के काफी नजदीक पहुंच गयीं। अभिजात मजदूर वर्ग की संख्या और प्रभाव दोनों बहुत कम हो गया और इन देशों के बुर्जुआ वर्ग को क्रांति का भूत सताने लगा।

एक ओर सोवियत संघ और पूर्वी यूरोप के जनता के जनवादी गणराज्य, दूसरी और साम्राज्यवादी देशों में मजबूत कम्युनिस्ट पार्टियां और मजदूर आन्दोलन। इसके साथ ही बुर्जुआ वर्ग की अपनी महामंदी और द्वितीय विश्व युद्ध का दिवालियापन। ऐसे में यदि बुर्जुआ वर्ग को अपनी सत्ता बचाये रखनी थी तो उसे भी अपनी कार्यनीति बदलनी थी। और उसने बदली।

द्वितीय विश्व युद्ध के बाद समूचे साम्राज्यवादी विश्व ने अपने यहां कल्याणकारी राज्य का तंत्र खड़ा किया जिसका माडल कीन्स ने 1930 के दशक की महामंदी के बीच पेश किया था। यह कल्याणकारी राज्य और कुछ नहीं बल्कि मजदूर वर्ग और बाकी मेहनतकश जनता को सुविधायें देकर उन्हें क्रांति से विरत करने की कोशिश थी। इस बड़े उद्देश्य की खातिर पूंजीपति वर्ग तात्कालिक तौर पर अपने मुनाफों में कुछ कटौती करने को भी तैयार था।

इस तरह इन साम्राज्यवादी देशों में कल्याणकारी राज्य का ताम-झाम खड़ा किया गया जिसमें न केवल बाकी दुनिया से लूटे जा रहे अतिलाभ का इस्तेमाल किया गया बल्कि जरूरत पड़ने पर पूंजीपतियों के मुनाफे में कटौती भी की गई । 1970 तक साम्राज्यवादी दुनिया में पूंजीवादी विकास की अपेक्षाकृत बेहतर स्थिति ने

भी इसमें साम्राज्यवादी बुर्जुआ की मदद की तब उसे किसी तीखी मंदी का शिकार नहीं होना पड़ा।

इस कार्यनीति का फायदा साम्राज्यवादी बुर्जुआ को मिला। उसने एक बार फिर न केवल अभिजात मजदूरों की संख्या में काफी वृद्धि कर ली बल्कि बाकी मजदूरों को भी एक हद तक फुसलाने में कामयाब हो गया। इसके परिणामस्वरूप इन देशों के मजदूर आन्दोलन में एक बार फिर अवसरवाद और सुधारवाद तेजी से बढ़ा तथा सारी कम्युनिस्ट पार्टियां क्रांति के रास्ते से विरत हो गई । सोवियत संघ में ख्रुश्चेव के आगमन के साथ उनका वही हश्र हुआ जो प्रथम विश्व यूद्ध के समय द्वितीय इंटरनेशनल की पार्टियों के साथ हुआ था यानि वे अवसरवाद-संसोधनवाद के दल-दल में डूब गयीं।

द्वितीय इंटरनेशनल की वारिस सामाजिक-जनवादी और समाजवादी पार्टियां तो पहले ही बुर्जुआ वर्ग की वफादार सेवक बनकर उसके राज्य का संचालन कर रही थी । इनमें से कई तो मार्क्सवाद का नाम लेना भी बन्द कर चुकी थीं। अब कम्युनिस्ट पार्टियों के पतन के बाद ये सभी मिलकर बुर्जुआ वर्ग के कल्याणकारी राज्य का संचालन करने लगी और मजदूरों के लिये कुछ और रियायतें हासिल कर लेने को ही अपना समाजवाद मानने लगी।

लेकिन 1980 व 1990 के दशक में भौतिक हालात बदले । 1970 के दशक से ही साम्राज्यवादी दुनिया आर्थिक ठहराव का शिकार होने लगी और यह संकट साल दर साल बढ़ता ही गया। पूरी दुनिया के स्तर पर भी पूंजीवाद का संकट और ज्यादा गहरा होने लगा। ऐसे में साम्राज्यवादी बुर्जुआ ने अपने मुनाफे को बढ़ाने के लिए, संकट से निकलने के लिए अपने मजदूर वर्ग और बाकी दुनिया पर व्यापक हमला बोल दिया। यह हमला कल्याणकारी राज्य को ध्वस्त करने से शुरू किया गया और इसके नारे थे 'उदारीकरण-निजीकरण और वैश्वीकरण'। इसके मुख्य नायक थे रोनाल्ड रीगन और मारग्रेट थैचर लेकिन जल्दी ही सारे साम्राज्यवादी शासकों ने इसे अपना लिया।

साम्राज्यवादी बुर्जुआ जानता था और व्यवहारतः यह साबित भी हुआ कि अभिजात मजदूर वर्ग उसके इस हमले का प्रतिरोध नहीं कर पायेगा। उसमें यह क्षमता नहीं बची थी। उसने क्रांति छोड़कर बुर्जुआ वर्ग की खैरात पर जिन्दा रहना तय किया था और खैरात छिन जाने पर वह ज्यादा प्रतिरोध नहीं कर सकता था। उसने क्रांति छोड़कर सुधारवाद का रास्ता चुना था और अब व्यवहार ने साबित किया कि सुधार क्रांति के उप-उत्पाद होते हैं, कि क्रांति छोड़ने से सुधार भी छिन जाते हैं । अब व्यवहार ने साबित किया कि मजदूर वर्ग यदि क्रांतिकारी नहीं तो कुछ भी नही है।

लेकिन पिछले दो दशकों में साम्राज्यवादी बुर्जुआ ने अपने मजदूरों की बहुत बड़ी सेवा की है। उसने कल्याणकारी राज्य को ध्वस्त कर के और अपने मजदूरों को प्राप्त सुविधाएं छीनकर उन्हें क्रांति की ओर धकेला है। उसने उन्हें उस ओर धकेला है कि वे बुर्जुआ वर्ग से स्वतंत्र होकर सोच सके। कुछ समय पहले तक कौन सोच सकता था कि अमेरिका की AFL-CIO भी इराक पर अमेरिकी आक्रमण का विरोध करेगी वही, AFL-CIO जिसने कोरिया पर अमेरिका के आक्रमण का विरोध नहीं किया, जिसने वियतनाम पर आक्रमण का विरोध नहीं किया, जिसने 1991 में इराक पर आक्रमण का विरोध नहीं किया। यह रीगन-बुश की मजदूर वर्ग के प्रति की गई सेवा है। इराक पर आक्रमण के समय साम्राज्यवादी देशों में लाखों की संख्या में मजदूरों का आक्रमण के विरोध में सड़कों पर स्वयं स्फूर्त ढंग से उतरना हमारे समय की सबसे बड़ी आह्लादकारी घटना है।

लेकिन यह सही दिशा में शुरूआत भर है। साम्राज्यवादियों द्वारा अकूत अतिलाभ कमाया जाना जारी है। इसी तरह कल्याणकारी राज्य चरमरा जाने के

बावजूद खत्म नहीं हुआ है, हालांकि संकट के गहराने के साथ चीजें इसी दिशा में आगे बढ़ेंगी। ऐसे में लेनिन द्वारा प्रस्तुत कार्यनीति इस समय भी उतनी ही मौजू है।

अपने देश की बात करें तो हमारे यहां भी मजदूरों में अभिजात मजदूर वर्ग का एक ऊपरी तबका विद्यमान है। यह सरकारी दफ्तरों के कर्मचारियों, सार्वजनिक क्षेत्र की कम्पनियों के मजदूरों तथा कुछ निजी क्षेत्र की कम्पनियों के मजदूरों से मिलकर बना हुआ है। यह कुल मजदूर आबादी (लगभग 20 करोड़) का करीब पांच फीसदी है।

हमारे देश के इस अभिजात मजदूर वर्ग का आर्थिक आधार विदेशों से कमाया जा रहा अतिलाभ नहीं है। बल्कि हमारे देश से तो साम्राज्यवादी अतिलाभ लूट कर ले जा रहे हैं। तब फिर इसका आर्थिक आधार क्या है?

इसका अर्थिक आधार भारतीय पूंजीपति वर्ग द्वारा सचेत तौर पर लागू की गई आर्थिक नीतियां हैं। आजादी के बाद यहां के पूंजीपति वर्ग ने अपने लिए जो विकास का माडल चुना उसमें उसने जनता के विद्रोह को निष्क्रिय करने के लिए एक ढ़ीले-ढ़ाले कल्याणकारी राज्य का भी प्रावधान रखा। इस कल्याणकारी राज्य के लक्ष्य ज्यादातर आबादी के वे हिस्से होने थे जो ज्यादातर मुखर थे, जो विद्रोह को स्वर दे सकते थे। इन मुखर तबकों को कुछ रियायतें दी जानी थी जिससे उनका मुंह बन्द कर उन्हें व्यवस्थापरस्त बनाया जा सके। ट्रेड यूनियनों में संगढित मजदूरों के ऊपरी तबके भी इसी श्रेणी में आते थे।

ट्रेड यूनियनों में संगठित इस मजदूर श्रेणी को न केवल पूंजीपति वर्ग ने कई सारे कानूनी अधिकार दिये बल्कि कई सारी आर्थिक व भौतिक सुविधाएं भी दीं। खासकर सरकारी विभागों व साार्वजनिक क्षेत्र में तो यह बहुत सचेत तौर पर किया गया। टाटा जैसे निजी घरानों ने भी यही नीति अपनायी।

इस सबका कुल परिणाम यह निकला कि भारत में भी अभिजात मजदूरों का एक ऊपरी सुविधाप्राप्त तबका पैदा हो गया। यह अक्सर पढ़ा-लिखा था, कुशल था, यूनियनों में संगठित था। कोढ़ में खाज यह कि यह अक्सर पेटी-बुर्जुआ पृष्ठभूमि से आया हुआ था।

इस सबके चलते वही हुआ जो बुर्जुआ वर्ग चाहता था। यह अभिजात मजदूर वर्ग बाकी मजदूर आबादी से खुद को काटकर अपनी सुविधाओं तक सीमित हो गया। यहां तक कि इसने अपने ही प्रतिष्ठानों के ठेका श्रमिकों को यूनियनों में शामिल करने से इंकार कर दिया। अक्सर ही इसने अपने को मजदूर मानने से इंकार कर दिया और बाकी मजदूरों को हिकारत की नजर से देखने लगा। वैचारिक तौर पर इसमें वे सारे गुण आ गये जो साम्राज्यवादी देशों के अभिजात मजदूरों में थे।

भाकपा और माकपा जैसे संशोधनवादी पार्टियों का आधार इसी अभिजात वर्ग में हैं । देहाती और शहरी पेटी बुर्जुआ के साथ यह अभिजात मजदूर वर्ग इनके संशोधनवाद का मुख्य सामाजिक आधार है।

इस अभिजात मजदूर वर्ग की मनोदशा का अंदाज इस बात से लगाया जा सकता है कि भाकपा व माकपा के अलावा शुद्ध बुर्जुआ पार्टियां-भाजपा,कांग्रेस शिवसेना व समता दल जैसी पार्टियां भी इनमें मजबूती से जड़ जमाये बैठी हैं।

यह भी सही है कि यही अभिजात मजदूर वर्ग पिछले पचास सालों से मजदूर आन्दोलन के नेतृत्व में रहा है। इसी ने पूरे मजदूर आन्दोलन का सत्यानाश किया है। (यहां हम फिलहाल कम्युनिस्ट क्रांतिकारी आन्दोलन की गलत रणनीति व कार्यनीति की चर्चा नहीं कर रहे हैं जिसने समूचे मजदूर आन्दोलन को भाकपा व माकपा के हवाले कर दिया) तब फिर आगे रास्ता क्या है?

इस मामले में सबसे पहली बात तो यह है कि भारतीय पूंजीपति वर्ग ने ही एक हद तक समस्या के समाधान का रास्ता खोल दिया है। 1991 से भारतीय

पूंजीपति वर्ग ने जो नई आर्थिक नीति शुरू की है, इसने अपने ढीले-ढाले कल्याणकारी राज्य पर जो धावा बोला है, निजीकरण-उदारीकरण-वैश्वीकरण के तहत देश पर जो साम्राज्यवादी दबाव बढ़ा है उसके कारण इस अभिजात मजदूर की संख्या और प्रभाव में भारी कमी आयेगी। लाखों की संख्या में मजदूर अभिजातों की श्रेणी से बाहर हो जायेंगे। जो उस श्रेणी में बचेंगे वे भी पहले से कहीं कम सुविधाओं,विशेषाधिकारों का इस्तेमाल कर पायेंगे । यह सैकड़ों तरीकों से होगा। यह पूंजीपति वर्ग की नयी आर्थिक नीतियों का वस्तुगत परिणाम होगा। वैसे भारतीय पूंजीपति वर्ग इस श्रेणी को लक्ष्य बना कर सीधे भी प्रहार कर रहा है। द्वितीय श्रम आयेाग की रिपोर्ट इसी प्रहार का कार्यक्रम है।

आज की ट्रेड यूनियन फेडरेशन और ज्यादातर ट्रेड यूनियन पूंजीपति वर्ग के इस प्रहार को झेलने में अक्षम हैं। वे सुविधाप्राप्त जमाने की सुविधा जनक यूनियनें हैं । उनके नेता सुविधाभोगी व भ्रष्ट हैं। वे देर-सबेर काल-कवलित हो जायेंगे ।

दूसरे, पूंजीवाद और साम्राज्यवाद का आक्रमण बाकी मजदूर आबादी और मेहनतकश जनता पर जो तबाही ढायेगा, उससे वे क्रांति की तरफ उन्मुख होंगे। उनका यह क्रांतिकारी उत्थान अभिजात मजदूरों में से भी बहुतों को क्रांति की ओर प्रेरित करेगा। उनमें ऊर्जा का संचार करेगा,उनकी पस्तहिम्मती को तोड़ेगा। केवल थोड़े से ही लाइलाज होंगे जो बुर्जुआ वर्ग के साथ खड़े होंगे।

इन वस्तुगत स्थितियों के अलावा आत्मगत तौर पर हमारी कार्यनीति क्या होनी चाहिये? वही, जो लेनिन ने प्रस्तुत की थी।

सबसे पहले तो हमें अभिजात मजदूर वर्ग और अवसरवादी नेताओं के खिलाफ अनवरत संघर्ष चलाना चाहिये। अवसरवादियों-संशोधनवादियों के खिलाफ लगातार संघर्ष चलाने के साथ-साथ ट्रेड यूनियन नौकरशाही को भी हमें निशाना बनाना चाहिए, भले ही वे किसी पार्टी से सम्बद्ध न हों। हमें इनका पर्दाफाश करना चाहिए और बाकी मजदूरों में इनकी साख खत्म कर देनी चाहिए।

दूसरे, जहां कहीं संभव हो हमें पुराने नेताओं को खदेड़ कर नये-नये नेता स्थापित करने चाहिये भले ही वे कितने अनुभवहीन क्यों न हों । खास कर ट्रेड यूनियन मोर्चो पर हमें पुराने नेताओं के बारे में तनिक भी मुगालता नहीं पालना चाहिये। जैसे भी संभव हो उनका पर्दाफाश करना चाहिये और उन्हें अलगाव में डालकर निकाल बाहर करना चाहिये । पुराने ट्रेड यूनियन नेताओं को लेकर कुछ भी नहीं किया जा सकता।

तीसरे, हमें अभिजात मजदूरों के नीचे,व्यापक जनसाधरण तक जाना चाहिये। यह तीन स्तरों पर किया जा सकता है।

पहले, वे संस्थान हैं जहां बड़ी संख्या में अभिजात मजदूरों के साथ वहीं भारी संख्या में मजदूर-जनसाधारण भी काम करते हें। ये ठेके पर या अस्थाई होते हैं। एक ही संस्थान में काम करते हुए भी दोनों की जीवन व काम करने की स्थिति में बहुत ज्यादा फर्क होता है। अक्सर तो ठेका व अस्थाई मजदूर यूनियन के सदस्य भी नहीं होते। इन ठेका व अस्थाई मजदूरों को संगठित करना, इनके प्रति अभिजात मजदूरों की हिकारत के रवैये के खिलाफ संघर्ष करना और अंततः दोनों को एक ही मंच पर ला खड़ा करना यह हमारा लक्ष्य होना चाहिये। इस प्रक्रिया में यदि अभिजात मजदूर हमारा साथ न भी दें तो कोई बात नहीं।

दूसरा, वे संस्थान हैं जो वैसे तो बड़े हैं लेकिन जहां जीवन व काम की परिस्थितियां बुरी हैं । इनमें से कइयों में यूनियनें हैं और कई जगह नहीं भी हैं । यहां अभिजात मजदूर न के बराबर है। हालांकि स्थाई,अस्थाई व ठेका का विभाजन यहां भी है। हमें इन संस्थानों पर विशेष ध्यान देना चाहिए।

तीसरा, वह क्षेत्र है जो सरकारी परिभाषा के अनुसार असंगठित क्षेत्र में आता है। ज्यादातर मजदूर इसी क्षेत्र में हैं। इनकी हालत सबसे खराब है। इन मजदूरों को संगठित करने का भी रास्ता देर-सबेर हमें खोजना होगा।

□ □ □